Global Journal of Multidisciplinary Studies Available online at www.gjms.co.in
Volume 2, Issue 2, January 2014
ISSN: - 2348-0459

भारत वर्ष के मंदिर व मठों का–राष्ट्र जागरण में योगदान

डा0 नितिन सहारिया

शा0एम0एम0महाविद्यालय कोतमा (अनूपपुर) मध्य प्रदेश

सारांश

हिन्दू जीवन पद्वति में मंदिर राष्ट्रीय चेतना का केन्द्र रहे है। मन्दिरो के निर्माण के पीछे चिन्तको व मनीषियो का उद्देश्य धार्मिक क्रिया कलापो तक ही सीमित नही था। धार्मिक क्रिया कलाप मंदिरो के निर्माण के निमित्त ही थे, लेकिन उससे कही अधिक राष्ट्र जागरण का विषय थे। जहा एक ओर मंदिर शैक्षणिक केन्द्र के रूप में व्यक्ति निर्माण में अपनी महती भूमिका का निवहन करते थे, वही दूसरो ओर समाजिक एकत्रीकरण व विभिन्न सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए मार्गदर्शन केन्द्रो के रूप में भी उपयोगी थे।

शब्दकोश:- धार्मिक, मार्गदर्शन।

प्रास्तावना

भारतीय संस्कृति में मंदिरो न अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निवहन किया है। जब–जब भारतीय संस्कृति संक्रमण के दौर से गुजरती है तब–तब मंदिरो का महत्व उभरकर समाज के सामने प्रकट हुआ है। मुस्लिमो के आक्रमण के समय जब देश की संस्कृति व धर्म पर आघात हुआ तब भी मंदिर सामाजिक सांस्कृतिक व धार्मिक चेतना के केन्द्र के रूप में समाज का मार्गदर्शन करते रहे। मध्यकाल और विशेष कर ब्रिटिश पराधीनता के परिणामस्वरूप उपजे असंतोष के काल में हिन्दू समाज को सुरक्षित करने में मंदिरो का विशेष योगदान रहा है। इसके अलावा राष्ट्रीय चेतना में मंदिरो के योगदान को स्वतंत्रता आंदोलन से पृथक करके नही देखा जा सकता। क्रांतिकारियो के दर्शन एवं केन्द्र के रूप में में इनकी महती भूमिका रही है। राष्ट्रीय स्वाधीनता के आंदोलन के काल में भी प्रेरणा के केन्द्र के रूप में मंदिरो की महती भूमिका रही है।

भारत वर्ष में पराधीनता के काल में अंग्रेजी शासन के खिलाफ पहला विद्रोह सन्यासियों ने ही किया था। सन् 1773 से तीस बरसो तक यह संघर्ष इतना तेजी से बढ़ा कि उसकी अनुगूंज आज भी बंगाल के समाज में देखी–समझी जा सकती है। दर असल सन् 1757 में प्लासी के युद्ध में सिराजुद्दौला को हराने के बाद बंगाल के शासन पर काबिज हुए अंग्रेजो के जुल्मो ने किसानो और कारोगरो की कमर तोंड दी थी। रही–सही कसर सन् 1769 के अकाल ने पूरी कर दी थी। कहा जाता है कि उस आकाल में करीब तीन करोड़ लोग भुखमरी के शिकार हुए थे। आकाल की विभीषिका

इतनी त्रासद थी कि उसका जिक्र और अंग्रेजी दमन और शोषण की कहानी बताते हुए एडमंड बर्क हाउस ऑफ लार्ड्स में बेहोश हो गए थे। उस वक्त भी लोगो में इस शोषण के खिलाफ गुस्सा तो था, लेकिन हथियार उठाने से लोग हिचक रहे थे। ऐसे में दशनामी संप्रदाय के साधुओं ने अंग्रेजो और उनके पिट्ठू जमींदारो के खिलाफ हथियार उठा लिये थे। तकरीबन तीन दशको तक लगातार चलते रहे इस युद्ध में साधनहीन सन्यासियों की ही विजय हुई थी। लेकिन उत्तरी बंगाल से लेकर बिहार तक में इन देश भक्त सन्यासियो की दिलेरी और देश भक्ति ने लोंगो का दिल जीत लिया था।

आज जिस वंदे मातरम् को हम गाते है, वह इसी संन्यासी विद्रोह पर आधारित बंकिमचन्द्र चटर्जी की अमरकृति आंनदमठ का एक अंश है। दिलचस्प बात यह है कि सन्यासी विद्रोह की ज्यादा जानकारी इतिहास मे नही मिलती है, लेकिन बंगाल के लोकजीवन में यह विद्रोह किंवदंतियो के तौर पर आज भी जिंदा है। यह सच है कि इतिहास की पुस्तकों में इस विद्रोह की ज्यादा जानकारी नही मिलती। प्रसन्न कुमार चौधरी और श्रीकान्त की पुस्तक 1857—बिहार—झारखण्ड में महायुद्ध में इस विद्रोह का जिक्र है। चौधरी के मुताबिक, इन विद्रोहियो की संख्या एक दौर में 50 हजार तक जा पहुॅची थी। आजादी के आंदोलन में स्वामी श्रद्धानंन्द और राहुल सांकृत्यायन की भूमिका को भी आखिर कैसे नजर अंदाज किया जा सकता है।

आजादी के आंदोलन में किसानो को संगठित करने और अंग्रेजी शासन के खिलाफ उनके विद्रोह की अगुवाई करने

वाले स्वामी श्रंद्धानंद भो सन्यासी ही थे। आजम गढ के केदार पाण्डे सन्यासी होकर बिहार के सीवान जिले के मैरवा मठ पर राहुल सांकृत्यायन के नाम से बतौर सन्यासी विराजमान थे। अगर वे चाहते, सन्यासी तौर पर मलाई खाते हुए वहां जिंदगी गुजार देते, लेकिन छपरा में जमीदारो और अंग्रेजी हुकूमत का किसानो के खिलाफ जोर–जुल्म उनको बर्दाश्त नही हुआ और उन्होने किसानो के आंदोलन की अगुवाई करने की ठान ली। इस आंदोलन में जमीदारो के गुगा ने उनकी जमकर पिटाई की। इस दौरान उनका सिर तक फट गया था। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इस हालिया इतिहास में सान्यासियो के इस आंदोलन को नकार पाना मुश्किल है। यानि, भारत की राजनीति में सन्यासियो की सक्रियता नई बात नही है। पाटलिपुत्र के महान मौर्य वंश की स्थापना भी चाणक्य ने ही की थी और वे भी एक तरह से सन्यासी ही थे।

यह सच है कि मौर्य वंश के शासक चन्द्रगुप्त मौर्य थे, लेकिन इतिहास भी मानता है कि चाणक्य का बौद्धिक कौशल नही होता तो चन्द्रगुप्त मौर्य न तो नंदवंश का नाश कर पाते और न ही पाटलिपुत्र में मौर्य वंश की स्थापना कर पाते। अर्थनीति और राजनीति के धुरंधर विद्वान के तौर पर स्थापित चाणक्य को भारतीय इतिहास का चमकता सितारा मानने से उन लोगो को भी शायद ही एतराज होगा, जिन्हे सन्यासी होते हुए बाबा रामदेव के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन से परेशानी हो रही है। मुगलो से विद्रोह करके शिवाजी महराज ने जिस मराठा साम्राज्य की नीव डाली थी उसकी कल्पना समर्थगुरू

रामदास ही वह शख्सियत थे, जिनसे प्रेरणा लेकर शिवाजी ने औरंगजेब की सेनाओ के खिलाफ गोलकुंडा की पहाडियो से छापामार युद्ध जारी रखा था और मराठा राज्य की मजबूत नींव रखने में सफल हुए थे। यह तो चंद बानगिंया है भारतीय इतिहास में ऐसे ढेरो पन्ने मिल जायेंगे। जिनमे सन्यासियो ने सामाजिक हितो के लिए खुद को कुर्बान कर दिया। गुरू गोविंद सिंह के साथी बंदा बैरागी कौन थे।

भारत वर्ष में 13 वीं–14 वीं शताब्दी में संतो ने यथा–रामानंद, चैतन्य, कबीर, गुरूनानक देव, रैदास, मीराबाई ने भक्ती आंदोलन के माध्यम से जनता में आध्यात्म की अलख जगाई थी। विदेशी आक्रान्ताओं द्वारा भारतीय संस्कृति को जो कुचलने का कार्य किया जा रहा था। उसे निरस्त करते हुए जनमानस मे राष्टिय चैतन्य को जागृत किया और अप संस्कृति से समाज की रक्षा की। जिसका प्रभाव आज भी देखा जा सकता है।

भारत वर्ष के सनातन हिन्दू धर्म की व्याख्या करते हुए स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि –"यदि राष्ट्र को जीवित रखना है तो उसके निवासियो के अंदर राष्ट्रभाव होना आवश्यक है यह भाव विश्व के लिए कार्य करता है। और उसकी धारणा के लिए आवश्यक है। जिस दिन विश्व की धारणा के लिए उस भाव की तत्व रूप में आवश्यक्ता समाप्त हो जाती है। उस दिन उस राष्ट्र का विनाश हो जाता है। हम भारत वासी इतनी आपत्तियां दुख–दरिद्र, एवं अंतवाहय अत्याचारों को झेलकर भी अब तक जीवित है, यही प्रमाण है कि

हमारा कोई राष्ट्रीय भाव है, जिसकी विश्व की धारणा के लिए आवश्यक्ता हैं।''

इसी राष्ट्रीय भाव (सनातन सत्य) को पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने '' राष्ट्र की आत्मा'' अथवा ''चिति'' कहा है। तो कवि इकबाल ने कहा है –

युनान मिश्र रोम, सब मिट गए जहां से
कुछ बात है कि हस्ती, मिटती नही हमारी
सदियो रहा दौरे, दुश्मन जहां हमारा।।

इसी सनातन सत्य की रक्षा का गुरूत्तर कार्य मंदिर, मठों के संतो, सन्यासियों, मठाधीशो, शंकराचार्यो, धर्म प्रवर्तकों ने किया और समाज, संस्कृति की रक्षा होती रही।

संदर्भ

* इतिहास – डा0 ए.के.मित्तल, पृ. 177, साहित्य भवन प्रकाशन आगरा, 2005।

* मुस्लिम आक्रमण का हिन्दू प्रतिरोध– डा0 शरद हेवालकर, पृ.57–79–83, श्री भारती प्रकाशन नागपुर, 2009।

* हिन्दू स्वाभिमान का स्वर्णिम पृष्ठ – गिरीश प्रभूणे, पृ.126, श्री भारती प्रकाशन, नागपुर 2009।

* राज एक्सप्रेस – अखबार, पृ. 06, दिनांक 13/06/2012 , प्रकाशन – रीवा म.प्र.।

* स्वामी विवेकानंद साहित्य संचयन – राम कृष्ण मिशन, बेलूरमठ कोलकाता।